नारीवाद की लाठी

Hans-Jörg Ronsdorf · अप्रैल 2021 · अक्टूबर 2026 में संशोधित

मेरी पुस्तक और स्त्री की भूमिका पर मेरे विचारों के विषय में आरोप वैसे ही आए, जैसी आशा थी: जो स्त्रियों को मंच (प्रचार-मंच) पर देखना चाहता है, उस पर (मसीह-विरोधी) नारीवाद ने क़ब्ज़ा कर लिया है।

"यह मसीह-विरोधी नारीवाद है, जो हर हाल में स्त्रियों का कोटा लागू करवाना चाहता है, बोर्ड-रूमों में भी और प्रचार-मंचों पर भी। विचित्र बात यह है कि इसके लिए स्त्रियों का पक्ष लेने वालों में पुरुष भी कम नहीं हैं।"

कठोर रूढ़िवादी सोच और आचरण वाले बहुत से मसीही नारीवाद को एक मूल रूप से ग़लत, बल्कि शैतानी या मसीह-विरोधी आंदोलन मानते हैं। बहुत वर्षों तक मैं भी कुछ ऐसा ही मानता था। परन्तु यह सोच बात को बहुत आसान बना देती है। **एक सीधा-सादा काले-सफ़ेद वाला तर्क वास्तविकता से पलायन है। क्योंकि जो ऐसा सोचते हैं, वे अनजाने में नारीवाद की सब उपलब्धियों को ख़ुशी से (बल्कि अवसरवादी ढंग से) स्वीकार कर लेते हैं** और उनके बिना जीने की कल्पना भी नहीं कर सकते (कुछ वैसे ही, जैसे श्रमिक संघों ने कर्मचारियों के लिए जो हासिल किया है)। क्या हमें ज़रा भी अंदाज़ा है कि 100 या 200 वर्ष पहले समाज में स्त्री के प्रति दृष्टिकोण कैसा था, और पुरुषों की तुलना में स्त्रियाँ कितनी अधिकारहीन थीं?

यहाँ कुछ उदाहरण हैं, यदि कोई स्वयं खोज न करना चाहे कि स्त्रियों के हित में क्या-क्या बदला है, **जो नारीवादी आंदोलनों से प्रेरित होकर बदला है**, अर्थात् स्त्री-आंदोलनों के प्रयासों के बिना ये परिवर्तन नहीं होते:

1878	व्यवसाय-संहिता (Gewerbeordnung) के एक संशोधन में पहली बार **मातृत्व-संरक्षण** का प्रावधान किया जाता है। इसके अनुसार जन्म के बाद तीन सप्ताह तक बिना वेतन के काम करने पर रोक लागू होती है।
1882	स्त्रियों और लड़कियों के लिए पहली **स्वास्थ्य- और मृत्यु-बीमा निधि** की स्थापना।
1891	राइखस्टाग (Reichstag) में पहला **श्रमिक-स्त्री संरक्षण क़ानून**; खदानों में भूमिगत स्त्री-श्रम पर रोक लगाई जाती है, स्त्रियों के लिए 11 घंटे का कार्य-दिवस और प्रसव के बाद चार सप्ताह का सवेतन विश्राम लागू किया जाता है। 12 मार्च को राइखस्टाग की एक बैठक में स्त्रियों को विश्वविद्यालय में अध्ययन की अनुमति देने से इनकार किया जाता है।
1900	**नागरिक संहिता** (Bürgerliches Gesetzbuch, BGB) लागू होती है। विवाह और परिवार से संबंधित अपने प्रावधानों के द्वारा यह स्त्री की क़ानूनी स्थिति को पितृसत्तात्मक परंपरा के अर्थ में स्थिर करती है, अर्थात् विवाह और पारिवारिक जीवन के सब प्रश्नों में निर्णय का अधिकार पति को मिलता है।
1918	30 नवंबर को स्त्रियों को **मत देने और चुनाव लड़ने का अधिकार** मिलता है। यह अधिकार 11 अगस्त 1919 के वाइमार संविधान के अनुच्छेद 109 धारा 2 में स्थिर है: "पुरुषों और स्त्रियों के सिद्धांततः समान नागरिक अधिकार और कर्तव्य हैं"।
1949	23 मई को **जर्मन संघीय गणराज्य का मूल क़ानून (संविधान)** प्रख्यापित किया जाता है। तब से नए संविधान के अनुच्छेद 3 धारा 2 वाक्य 1 में संक्षेप और स्पष्टता से लिखा है: **"पुरुष और स्त्रियाँ समान अधिकार रखते हैं।"**
1952	**मातृत्व-संरक्षण क़ानून** – कामकाजी माता की सुरक्षा का क़ानून।
1957	नागरिक क़ानून के क्षेत्र में पुरुष और स्त्री के समान अधिकार का क़ानून (**समानाधिकार क़ानून**) मुख्य रूप से पारिवारिक क़ानून को बदलता है। ये प्रावधान 1 जुलाई 1958 को लागू होते हैं।

1961	**पारिवारिक क़ानून संशोधन अधिनियम** – जब पति विवाह टूट जाने के आधार पर तलाक़ माँगे, तो पत्नी की क़ानूनी स्थिति में सुधार। विवाह के बाहर जन्मे बच्चे के पिता का भरण-पोषण का दायित्व बच्चे के 18 वर्ष पूरे होने तक (पहले 16 वर्ष पूरे होने तक)।
1968	**मातृत्व-संरक्षण क़ानून का विस्तार** – प्रसव से पहले संरक्षण-अवधि छह सप्ताह है। प्रसव के बाद संरक्षण-अवधि बढ़ाकर आठ सप्ताह कर दी गई है; समय-पूर्व और एक से अधिक बच्चों के जन्म में यह अवधि बारह सप्ताह तक बढ़ जाती है।
1975	**पाँचवें दंड-क़ानून सुधार अधिनियम के पूरक उपायों का क़ानून** – जो स्त्रियाँ वैधानिक स्वास्थ्य-बीमा में बीमित हैं, उन्हें गर्भ-निरोध के प्रश्नों पर व्यक्तिगत चिकित्सीय परामर्श का अधिकार है।
1977	**विवाह और पारिवारिक क़ानून के सुधार का पहला क़ानून** – साझेदारी का सिद्धांत: विवाह में क़ानून द्वारा निर्धारित कोई कार्य-विभाजन नहीं। दोष-सिद्धांत के स्थान पर विवाह-विच्छेद (टूटन) का सिद्धांत। जो जीवन-साथी तलाक़ के बाद अपना भरण-पोषण स्वयं नहीं कर सकता, उसे भरण-पोषण का अधिकार मिलता है।
1980	संघीय सरकार कोपेनहेगन में संयुक्त राष्ट्र के विश्व महिला सम्मेलन में 18 दिसंबर 1979 के **स्त्रियों के विरुद्ध हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन** के **समझौते** पर हस्ताक्षर करती है।
1985	18 दिसंबर 1979 के संयुक्त राष्ट्र समझौते से संबंधित, **स्त्रियों के विरुद्ध हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन का क़ानून** लागू होता है।
1994	मूल क़ानून (संविधान) के अनुच्छेद 3 धारा 2 के **समानाधिकार-निर्देश** में यह जोड़ा जाता है: **"राज्य स्त्रियों और पुरुषों के समान अधिकार को वास्तव में लागू करने को बढ़ावा देता है और विद्यमान असुविधाओं को दूर करने के लिए कार्य करता है।"**

चयन का आधार: Zeittafel zur Geschichte der Gleichstellung (जर्मन में), बीलेफ़ेल्ड विश्वविद्यालय

यहाँ वर्णित परिवर्तन मसीही उपलब्धियाँ नहीं हैं, यद्यपि संभवतः मसीहियों ने भी अपने दृढ़ विश्वास के साथ इनमें योगदान दिया है। परन्तु इनका लाभ सब मसीही स्त्रियों को मिलता है – और इसलिए उनके पतियों को भी।

नारीवाद मूल रूप से पहले तो सब मनुष्यों की समानता के लिए और स्त्रियों के विरुद्ध हर भेदभाव के विरोध में प्रयास करता है। क्या कोई इसके विरुद्ध सिद्धांततः कुछ कह सकता है? जैसा अक्सर ग़लती से मान लिया जाता है, उसके विपरीत नारीवाद का अर्थ सदा केवल स्त्री-अधिकारों को एकतरफ़ा मज़बूत करना नहीं है, बल्कि बराबरी के स्तर पर एक दूसरे से मिलना भी है।

नारीवादी आंदोलन और लहरें, और उन्नीसवीं सदी में आरंभ हुआ स्त्री-अधिकार आंदोलन, निश्चय ही पवित्र आंदोलन नहीं थे। कोई ऐसा दावा नहीं करता। परन्तु उनकी प्रेरणा इस बात से थी कि जीवन की बहुत सी बातों में वे वंचित थीं और पुरुषों से कम अधिकार रखती थीं। **मसीही पुरुषों से मेरा प्रश्न है: क्या परमेश्वर, सृष्टिकर्ता, यह चाहता है कि स्त्रियों को वे सब मानवाधिकार न मिलें, जो पुरुषों के पास हैं?**

यह बात कि इस आंदोलन ने गर्भपात को वैध ठहराए जाने की भी माँग की है और उसे बड़ी हद तक प्राप्त भी कर लिया है, हमें इस बात से धोखा न दे कि स्त्रियों ने अन्याय और अन्यायपूर्ण व्यवहार के विरुद्ध संघर्ष किया, और उन्हें करना भी पड़ा, ताकि इतिहास की धारा बस यूँ ही आगे न चलती रहे।

एक आंदोलन और समय की प्रवृत्ति के रूप में नारीवाद, हर दूसरे आंदोलन की तरह, जटिल, बहुस्तरीय और बहुआयामी है – एक विशाल विषय-क्षेत्र, जिसकी मुझे वास्तव में गहरी जानकारी नहीं है। और मेरा विश्वास है कि

उन अधिकांश मसीहियों को भी नहीं, जो इस शब्द का (अपमानजनक अर्थ में) प्रयोग करते हैं। जो "नारीवाद की लाठी" (Feminismuskeule) चलाता है, वह इस धारणा का एकतरफ़ा प्रयोग करता है और उसे एक औज़ार बना लेता है – अधिकतर भोली अज्ञानता के साथ।

स्त्रियों और पुरुषों के समान अधिकार के पक्ष में बोलने के लिए मुझे किसी नारीवादी सिद्धांत की आवश्यकता नहीं है। यह बात कि समान अधिकार कुछ ऐसा है जिसे फिर से संघर्ष करके पाना पड़ा, इस बात का प्रमाण है कि पतन ने क्या किया है। "पुरुष स्त्री पर प्रभुता करेगा" (तुलना करें उत्पत्ति 3:16) – वह उसे छोटा रखेगा, उसे दबाएगा और उसका शोषण करेगा। यह सब युगों की बहुत सी संस्कृतियों में सिद्ध किया जा सकता है और इसलिए गहराई तक घिस-घिसकर बैठ गया है, मानो पुरुष होने के डीएनए में स्थिर हो गया हो। **यह दृष्टिकोण लगभग विरासत में मिलता है। अब तो यह भली-भाँति प्रमाणित है कि परिवार और संस्कृतियाँ केवल जैविक लक्षण ही नहीं, बल्कि गहरे संस्कार भी आगे सौंपते हैं। यह दृष्टिकोण बहुत से मसीही पुरुषों की सोच में भी बसा हुआ है, जो बाइबल को ठीक इसी चश्मे से पढ़ते हैं और पुरुष और स्त्री के विषय में अपना पदानुक्रमिक दृष्टिकोण बाइबल में पढ़ डालते हैं। जिस संस्कृति में वे रहते हैं उससे प्रभावित, युग की आत्मा (ज़ाइटगाइस्ट) से भरे हुए।**

सुसमाचार वह बदलने वाली और नया बनाने वाली सामर्थ है, जो इन पुराने सोच-ढाँचों को तोड़ और बदल सकती है। प्रेरित अपने दिनों में इन पुराने, पापमय पितृसत्तात्मक ढाँचों को बस यूँ ही भंग नहीं कर सकते थे, क्योंकि वह सुसमाचार का अंत होता। वह उस समय की सामाजिक संरचना पर आक्रमण होता, जो रोमी साम्राज्य को जोड़े रखती थी और मानो उसकी नींव थी। इसीलिए प्रेरितों के कुछ वचन ऐसे लगते हैं, मानो वे इन पुराने, पापमय ढाँचों का समर्थन करते हों। परन्तु वे ऐसा नहीं करते (दासों के विषय में उनके वचन देखिए)। बल्कि उन ढाँचों को भीतर से खोखला किया जाता है। जो ध्यान से पढ़ता है – सृष्टि-वृत्तांत की पृष्ठभूमि में, इस पृष्ठभूमि में कि यीशु स्त्रियों के साथ कैसा व्यवहार करते थे – वह पहचानता है **कि वे एक ऐसा मार्ग दिखाते हैं, जिसका अर्थ पापमय पदानुक्रम का अंत है: बिना शर्त, आत्म-बलिदानी प्रेम और एक दूसरे के अधीन रहना और आदर। यह पितृसत्ता और एकतरफ़ा अधीनता का अंत है।**

निश्चय ही नारीवाद आंशिक रूप से दूसरी ओर घोड़े से गिर पड़ा है (एक अति से दूसरी अति में चला गया है)। यह मूल रूप से ग़लत है, जब स्त्रियाँ अब उसी चीज़ के पीछे भागें, जिसका दोष वे पुरुषों पर लगाती हैं। ग़लत भूमिकाओं की केवल अदला-बदली ग़लत ही रहती है और संसार को चंगाई नहीं देती। सब कुछ पहले जैसा ही रहता है, बस शासन करने वाला लिंग अब स्त्री होता।

सृष्टिकर्ता के मन में इनमें से कुछ भी नहीं था। उसका विचार बहुत अच्छा था: पुरुष और स्त्री, जो पदानुक्रम के किसी अंतर के बिना एक दूसरे के पूरक हों। हर मनुष्य को और दोनों लिंगों को विशेष गुण मिले हैं, जो दूसरे में कम पाए जाते हैं। **इसीलिए पूरकता, इसीलिए बराबरी के स्तर पर आमने-सामने होना।**

परमेश्वर की सृष्टि की व्यवस्था के अनुसार यह सिद्धांत विवाह, परिवार, कलीसिया और समाज पर लागू होता है। जब इसे लागू किया जाता है और इसके लिए प्रयास किया जाता है, तब इन क्षेत्रों में नई सृष्टि का एक झोंका बहता है।

Hans-Jörg Ronsdorf, सुल्ज़बर्ग (Sulzberg), 12 अप्रैल 2021